तत्त्वार्थ-सूत्र
अध्याय-**4** सूत्र **24-26**

मोक्षमार्गस्य नेतारं, भेत्तारं कर्मभूभृताम्।
ज्ञातारं विश्वतत्त्वानां वन्दे तद्गुणलब्धये॥
तत्त्वार्थ-सूत्र ग्रन्थराज में चतुर्थ अध्याय के माध्यम से देवों का वर्णन चल रहा है। वैमानिक देवों के विषय में बताते हुए, उनकी बहुत सारी विशेषताओं का ज्ञान कराते हुए, कल आपको लेश्याओं के बारे में जो सूत्र आया था उसके माध्यम से कुछ लेश्याओं का एक सामान्य रूप से उनका महत्व और लेश्याओं की किस तरीके से किन-किन गतियों में उपादेयता होती है, यह बताया गया था। उसी विषय में थोड़ा-सा कुछ कहना और आवश्यक समझता हूँ। क

Class 25

सूत्र का अर्थ, सिद्धान्त ग्रन्थों से विरोध को प्राप्त नहीं होना चाहिए, अतः इस सूत्र में मिश्र लेश्याओं का कथन भी जानना
वैसे तो कल ही बहुत पर्याप्त हो गया था। फिर भी लेश्याओं का जो वर्णन हैं, उसमें यह जो सूत्र आया है, 'द्वि-त्रिशेषेषु' ऐसा कहते हुए सूत्र में जो पीत-पद्म-शुक्ललेश्याः इनका जो वर्णन किया है यानि दो युगलों में, तीन युगलों में और शेष युगलों में, यह पीत, पद्म और शुक्ल लेश्या का वर्णन है। इस सूत्र में एक तो विशेषता यह है कि यहाँ पर पीत आदि लेश्यायों के साथ में, जहाँ कहीं पर भी पद्म आदि लेश्याएँ भी होती हैं, उनका भी ग्रहण आगम के अविरोध से करना होता है। यानि आगम में जैसा लिखा हुआ है उसी के अनुसार, आगम से विरोध न आए; ऐसा जानते हुए पीत के साथ में पद्म, पद्म के साथ में शुक्ल लेश्याएँ भी मिश्र रूप से उन-उन युगलों में पायी जाती हैं।

किन-किन स्वर्गों में मिश्र लेश्याएँ पायी जाती हैं?
यह इस सूत्र से ही ध्वनित होता है कि दो युगल में पीत लेश्या बताई गई तो एक तो युगल हो जाता है- सौधर्म-ऐशान, यह एक युगल कल्प हो गया और एक

सानत्कुमार-माहेन्द्र, यह दूसरा युगल कल्प हुआ। इन दोनों में पीत लेश्या बताई है, तो पीत लेश्या के साथ-साथ पद्म लेश्या भी सानत्कुमार-माहेन्द्र से कहीं से शुरू हो जाती है। अब यह यहाँ पर मिश्र लेश्या के माध्यम से यह सूत्र की रचना हुई है यानि इस सूत्र में मिश्र लेश्याओं का कथन भी किया गया है। अगर हम इस सूत्र के अनुसार देखते हैं तो सौधर्म-ऐशान, सानत्कुमार और माहेन्द्र, इन दो युगल कल्पों में पीत लेश्या की व्यवस्था बैठ जाती है लेकिन जानकारी में यह भी रखना कि सानत्कुमार-माहेन्द्र में पद्म लेश्या भी प्रारम्भ हो जाती है। उसके बाद में तीन जो युगल कल्प आएँगे; ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर, लान्तव-कापिष्ठ और शुक्र-महाशुक्र, इनमें अगर इस सूत्र के अनुसार देखें तो केवल पद्म लेश्या का उल्लेख है। जबकि इन्हीं कल्प-युगलों में से किन्हीं में पद्म के साथ में शुक्ल लेश्या भी प्रारम्भ हो जाती है और शुक्र-महाशुक्र के बाद में जब यह शतार-सहस्रार आता है और उसके बाद आनत-प्राणत, आरण आदि आते हैं तो इन सब में शेष शब्द की अनुवृत्ति करके शेष में सभी में शुक्ल लेश्या है, ऐसा जानने में आ जाता है। इससे यह सिद्ध होने लग जाता है कि इस सूत्र के अनुसार ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर, लान्तव-कापिष्ठ और शुक्र-महाशुक्र, इन तीन युगलों तक तो पद्म रही और फिर उसके बाद में शतार-सहस्रार यहीं से जो है, शुक्ल लेश्या प्रारम्भ हो गई। जबकि शुक्ल लेश्या का मुख्यतया जो वर्णन आता है, वह आनत आदि स्वर्गों से आता है। यह मिश्र के साथ में इस लेश्या का विभाजन करके इस सूत्र की रचना हुई है। यह एक तरह से, इस तरह से सूत्र का जो व्याख्यान किया गया है, वह सभी के द्वारा मान्य है और इसी तरह का अर्थ जो है, आपको इस सूत्र के साथ में लगाना पड़ेगा। दो कल्पों में, तीन युगल कल्पों में और शेष बचे हुए कल्प और कल्पातीतों में शुक्ल लेश्या का विधान है, इस तरह से सूत्र का सामान्य अर्थ होता है। सैद्धान्तिक दृष्टि से इस सूत्र में बहुत सारी जो मिश्र लेश्याओं का वर्णन होता है, वह आपको सिद्धान्त में जहाँ जैसा बताया गया है, उसी के अनुसार घटित करना होगा।

आचार्य विद्यानन्दी महाराज द्वारा श्री श्लोकवार्तिक ग्रंथ में की गई इस सूत्र की व्याख्या

दूसरा इसका एक तरीका, बहुत अच्छा तरीका एक और बताया गया है। आचार्य विद्यानन्दी महाराज ने श्लोकवार्तिक ग्रन्थ की रचना की है, जिसके माध्यम से उन्होंने इसी सूत्र के साथ में व्याकरण के अनुसार नियमों को लगाते हुए, एक इसकी नई

technique यह बताई कि आप इसका इस तरह से भी व्याख्यान कर सकते हो, वह भी सुनने योग्य है। कहते हैं कि

'द्वि' जो शब्द है, इसको तीनों के साथ लगाओ।

- पीत के साथ भी,
- पद्म के साथ भी और
- शुक्ल के साथ भी,

कैसे बनाना?

- 'द्वयोः पीताः' यानि दो कल्प युगलों में पीत लेश्या है। दो कल्प युगल कौन से हो गए? सौधर्म-ऐशान, सानत्कुमार-माहेन्द्र। यह पीत की व्यवस्था बैठ गई।

फिर कहते हैं-

- 'द्वयोः पद्माः' अब दो कल्प युगलों की अपेक्षा से न कह कर के, इनको इन्द्रों की अपेक्षा से घटित करो। आपको बताया था कि ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर इनका एक इन्द्र है। एक इन्द्र यह हुआ और लान्तव-कापिष्ठ इनका एक इन्द्र है, तो दो इन्द्र ये हुए। यह एक इन्द्र का युगल हुआ। यह एक इन्द्र युगल हुआ और फिर जो है लान्तव-कापिष्ठ के बाद शुक्र-महाशुक्र का एक इन्द्र हुआ और शतार-सहस्त्रार का एक इन्द्र हुआ तो यहाँ तक यह दूसरा इन्द्र युगल हो गया, इसमें भी पद्म लेश्या घटित हो गई।

'द्वयोः पद्माः' मतलब यहाँ पर पद्म का मतलब ऐसे इन चार कल्प युगलों में, दो इन्द्रों के साथ में, यह पद्म लेश्या व्यवस्थित की गई है। यह भी एक अच्छा गणित है और सूत्र का एक नया अर्थ है, जो किसी-किसी को ही पता होता है। यह ध्यान में रखने योग्य है। फिर शुक्ल के साथ लगाना तो

- शुक्ल के साथ में अब क्या बचा? शतार-सहस्रार तक पहुँच गए। अब देखो! आनत-प्राणत, आरण और अच्युत। इनमें भी दो कल्प युगल तो आनत-प्राणत एक कल्प युगल और आरण-अच्युत एक कल्प युगल तो आनत से लेकर के ये सोलहवें स्वर्ग तक यह शुक्ल लेश्या की व्यवस्था हो गई। समझ आ रहा है?

मुझे थोड़ा कुछ यह व्यवस्था ज्यादा ठीक लग रही है क्योंकि इस व्यवस्था में शतार-सहस्रार में भी पद्म लेश्या आ जाती है। सिद्धांत-ग्रन्थों के अनुसार वहाँ पर भी पद्म लेश्या मानी है।

श्री सर्वार्थसिद्धि ग्रन्थ के अनुसार इस सूत्र की व्याख्या करने पर शतार-सहस्रार स्वर्ग में शुक्ल लेश्या का कथन आता है जबकि वहाँ पर पद्म लेश्या की मुख्यता है, शुक्ल लेश्या गौण है

लेकिन अगर हम जो प्रचलित अर्थ है, जो सर्वार्थसिद्धि आदि में दे रखा है या सामान्यतया जो लोग अर्थ करते हैं, उसके अनुसार अगर हम द्वि-त्रि-शेषेषु में अगर केवल 'त्रि' का मतलब तीन कल्प युगल लेते हैं तो हम शतार-सहस्रार तक नहीं पहुँच पाते हैं। शुक्र-महाशुक्र पर ही तीन कल्प युगल पूरे हो जाते हैं। शतार-सहस्त्रार में फिर शुक्ल लेश्या होने का एक मतलब प्रसंग आ जाता है। जबकि वहाँ पर शुक्ल लेश्या भी pure नहीं है, **pure** शुक्ल लेश्या आनत से प्रारम्भ होती है। वहाँ पर भी मुख्यतया पद्म लेश्या है, शुक्ल लेश्या गौण है।

आचार्य विद्यानन्दी महाराज की व्याख्या के अनुसार शतार-सहस्रार में पद्म लेश्या सिद्ध हो जाती है।

इस व्यवस्था से जो आचार्य विद्यानन्दी महाराज ने दी है, यह व्यवस्था से जो है शतार-सहस्रार तक भी पद्म लेश्या सिद्ध हो जाती है। उसके बाद में, आनत-प्राणत, आरण-अच्युत, इन अगर हम दो कल्प युगलों में शुक्ल लेश्या को मानेंगे तो इसका 'द्वि' का सम्बन्ध देखो ऐसे हो गया; द्वयोः पीताः, द्वयोः पद्माः और द्वयोः शुक्लाः। द्वयोः का मतलब दो कल्प युगल लिए जाएँगे। अगर इन्द्रों की अपेक्षा से ले तो दो इन्द्र युगल ले लो तो दो पीत में चार इन्द्र आ गए। 'द्वयोः पद्माः' में लो तो उसमें जो है, दो-दो का एक इन्द्र करके चार कल्प युगल उसमें आ जाएँगे। फिर जो है द्वयोः शुक्लाः में लेंगे तो आनत-प्राणत, आरण-अच्युत, ये कल्प युगल तो दो हो गए और इन्द्र की अपेक्षा से चार हो गए, इनमें जो है, शुक्ल हो गया। दो कल्प युगलों में इस तरह से शुक्ल लेश्या का विधान हो गया।

आचार्य विद्यानन्दी महाराज के अनुसार 'त्रि-शेषेषु' की व्याख्या

अब 'द्वि' का तो सम्बन्ध हो गया। अब 'त्रि-शेषेषु' इसको कहाँ लगाओगे? अच्छी व्यवस्था यह दी है कि 'त्रि' का सम्बन्ध केवल शुक्ल लेश्या के साथ है और शेषेषु का सम्बन्ध भी शुक्ल लेश्या के साथ है। तो कैसे? अब हम चलें सोलहवे स्वर्ग के ऊपर ग्रैवेयकों में, तो ग्रैवेयक तीन प्रकार के होते हैं। है ना!। अधो ग्रैवेयक, मध्यम ग्रैवेयक

और ऊर्ध्व ग्रैवेयक। 'त्रि' का संबंध यहाँ से लगाना कि इन ग्रैवेयकों में शुक्ल लेश्या है। त्रिषु शुक्लाः, ऐसा। अतः

- अधो ग्रैवेयक में भी,
- मध्यम ग्रैवेयक में भी और
- ऊर्ध्व ग्रैवेयक में भी, इन तीनों में शुक्ल लेश्या है।

'त्रि' का मतलब यह है और शेष का मतलब अब जो बचें,

- अनुदिश और अनुत्तर विमान, उनमें परम शुक्ल लेश्या है।

सो यह व्यवस्था पूरी बैठ जाती है।

दो आचार्यों के अभिप्राय से उपरोक्त दो व्यवस्थाएँ बैठती है
दो आचार्यों के अभिप्राय से दो व्यवस्थाएँ बैठती हैं

- एक तो आचार्य पूज्यपाद महाराज हैं जिन्होंने पहली व्याख्या की, जो आपको कल भी बताई गई, शुरू में आज फिर बताया। और
- जो यह नई व्याख्या बताई है, यह व्याख्या आचार्य विद्यानन्दी महाराज की श्लोकवार्तिक की है,

इसके अनुसार भी बहुत अच्छा स्पष्टीकरण बैठता है, बशर्ते कि यह संस्कृत की व्याकरण के अनुसार लोग इसको समझ पाए। क्योंकि 'द्वि' का सम्बन्ध पीत के साथ भी, पद्म के साथ भी और शुक्ल के साथ भी है। 'त्रि' का सम्बन्ध केवल शुक्ल के साथ है और 'शेष' का सम्बन्ध भी केवल शुक्ल के साथ है। ये जो है, एक अच्छी नई व्यवस्था है, समझ में आ जाए तो ठीक है। आचार्यों ने जो लिखा है उनके अभिप्राय को बताना, यह अपने लिए इष्ट था, सो आपको बता दिया।

लौकान्तिक देवों का वर्णन
अब इसके आगे जो सूत्र था, वह तो हमने कल पढ़ ही लिया था कि ग्रैवेयक से पहले के सभी देव कल्पवासी होते हैं और उसके आगे के सभी देव जो है, कल्पातीत कहलाते हैं। इस तरह से यह वैमानिक देवों की व्यवस्था बताते हुए, अब यहाँ जो आगे के दो सूत्र आ रहे हैं या तीन सूत्र आ रहे हैं। यह एक तरीके से अब ये वैमानिक देवों में जो कुछ भी और विशेषता बची है, उसको बताने के लिए आ रहे हैं। इसी सूत्र को आगे पढ़ते हैं -

ब्रह्मलोकालया लौकान्तिकाः॥**4.24**॥

अब यहाँ पर सूत्र में लौकान्तिकाः मतलब लौकान्तिक देवों का कथन प्रारंभ हो रहा है। लौकान्तिक देव का रहना कहाँ होता है? ब्रह्मलोक ही जिनका आलय हैं, उन्हें लौकान्तिक देव कहते हैं। ब्रह्मलोक जिसे हम ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर नाम के स्वर्ग के नाम से जानते हैं तो वह पाँचवें स्वर्ग का नाम पड़ता है। सौधर्म, ऐशान, सानत्कुमार-माहेन्द्र, ब्रह्म, उसी ब्रह्म मतलब पाँचवें स्वर्ग को यहाँ पर ब्रह्मलोक कहा गया है। उस ब्रह्मलोक में जिनके आलय हैं, उनका नाम है- लौकान्तिक देव।

लौकान्तिक देवों का वर्णन अलग से करने का कारण

अब आपको यह ध्यान रखना है कि यह जो पाँचवाँ स्वर्ग है, यह सोलह स्वर्गों के बीच में हैं। इस पाँचवें स्वर्ग में रहने वाले जो देव हैं, वे ब्रह्मलोक के वासी जो देव हैं, वहाँ पर सभी प्रकार के कल्पों की व्यवस्था होती है। जो कल्प में दस प्रकार की व्यवस्था बताई गई, वह भी ब्रह्मलोक में होती है क्योंकि ब्रह्म स्वर्ग जो है, सोलह स्वर्गों के बीच में आता है। अतः जो देवों की कल्पवासी जो व्यवस्था है, वह व्यवस्था इन देवों में भी पाई जाती है, जो ब्रह्मलोक के देव कहलाते हैं या ब्रह्म स्वर्ग के देव कहलाते हैं। यानि कि यह जानना कि ब्रह्म स्वर्ग में रहने वाले जो देव होते हैं, वे देव सभी; इन्द्र, सामानिक, त्रायस्त्रिंश आदि, इन भेदों के साथ में मिलेंगे। वहाँ पर देवियाँ और उनकी जो लेश्या, उनकी जो विक्रिया इत्यादि जिस तरीके से सौधर्म-ऐशान, सानत्कुमार-माहेन्द्र में बढ़ते हुए क्रम से बताई जाएगी, वैसे ही ब्रह्म आदि में मिलेगी। लेकिन यहाँ यह सूत्र जो special रूप से, अलग से कहा गया है, वह कुछ इसलिए कहा गया है कि ये जो लौकान्तिक देव होते हैं, ये यद्यपि रहते तो उसी ब्रह्म स्वर्ग के ही भाग में हैं लेकिन यह लौकान्तिक देव उस ब्रह्म स्वर्ग में रहने वाले देवों से बिल्कुल अपना आलय अलग रखते हैं और इनका स्थान भी अलग होता है।

लौकान्तिक देवों की व्यवस्था ब्रह्म स्वर्ग में रहने वाले देवों से बिल्कुल अलग होती है

इनकी व्यवस्था भी ब्रह्म स्वर्ग में रहने वाले देवों से बिल्कुल अलग होती है इसलिए यह अलग से सूत्र आया है। अन्यथा लौकान्तिक देव भी उसी पाँचवें स्वर्ग के देव कहलाएँगे। उनके साथ भी देवियाँ होंगी, उनके साथ भी उसी तरह से जो प्रवीचार की व्यवस्था बताई गई है, वह सब सिद्ध होगी। यहाँ पर यह सूत्र इसीलिए अलग किया गया है कि

- इनकी प्रवीचार आदि की कोई व्यवस्था नहीं है।
- वहाँ पर देवियों की व्यवस्था नहीं है।
- इनके आलय उनसे बिल्कुल अलग हैं। जो इन्द्र बनकर के रहें, वो अलग रहें और जो लौकान्तिक बनकर के रहेंगे, वो अलग रहेंगे। सुन रहे हैं!

लौकान्तिक, जिन्होंने अपने लोक अर्थात् संसार का अन्त कर दिया
एक शब्द जो इनके लिए famous है, क्या है? लौकान्तिक; लोक का अन्त जिन्होंने कर दिया है, लोक माने संसार, माने कि अब इनके संसार का अन्त हो ही गया, ये समझ लो। समझ आ रहा है न! भले ही ये स्वर्ग में रह रहे हैं, देव हैं, लेकिन चूँकि अगले भव में इनके संसार का अन्त होना है, तो उससे एक पिछला भव भी जो है, इनके साथ में इसी रूप में जुड़ जाता है; उपचार इसी को बोलते हैं। हैं न!

उपचार से कथन करने की पद्धति
कल राजकुमार राजा होने वाला है, तो आज ही उस राजकुमार को हम राजा कह लेते हैं, क्योंकि उपचार की यही व्यवस्था है। जिस समय पर सिंहासन पर बैठेगा, उस समय तो हो ही जाएगा लेकिन उससे पहले ही हो जाता है। समझ आ रहा है न! जब से बिनौली निकलना शुरू हो जाती है, तभी से मुनि हो गए-मुनि हो गए या क्षुल्लक हो गए-क्षुल्लक हो गए; तो लोगों में वो भाव आ ही जाता है।

Class 26

लौकान्तिक देव एक भवावतारी होते हैं

इसी तरीके से जिनका अगला भव, नियम से एक भवावतारी होते हैं ये और अगले भव में जिन्हें नियम से मुक्ति मिलेगी, ऐसे ये लौकान्तिक देवों को उपचार से, स्वर्ग में रहते हुए भी लोक का अन्त करने वाले, माने संसार का अन्त करने वाले, ये विशिष्ट लौकान्तिक देव कहे जाते हैं। उन्हीं लौकान्तिक देवों का वर्णन करने के लिए यह सूत्र आया है और इस सूत्र में यह बताया गया है कि ये सभी जो लौकान्तिक देव हैं, ये सब

एक भवावतारी होते हैं। यानि अगला मनुष्य भव लेकर के यह सभी नियम से मोक्ष को प्राप्त होते हैं।

लौकान्तिक देवों की विशेषताएँ

अन्य जो विशेषताएँ हैं, वो आप बहुत कुछ जानते ही हैं। इन लौकान्तिक देवों की यह विशेषता है कि

- इनके साथ में कोई परिवार नहीं होता है। सुन रहे हो! एक भवावतारी होने के लिए ये भी ध्यान रखना पड़ेगा कि इनके पास में, स्वर्गों में रहते हुए भी इनके लिए कोई और महिलाएँ, स्त्रियाँ या इनके कोई और परिवार देव वगैरह कुछ नहीं होते हैं।
- ये सभी स्वतन्त्र होते हैं और कोई भी पराधीन नहीं होते हैं। और
- स्वर्गों में रहते हुए भी कल्प की व्यवस्थाओं के बीच में रहते हुए भी इनके साथ वो कल्प की व्यवस्था fit नहीं बैठती है, ये उसके अपवाद हैं।

लौकान्तिक देव कथञ्चित अहमिन्द्रों से भी विशिष्ट हैं

तो क्या होता है? एक तरीके से यही समझ लो कि जब किसी के साथ कोई भी पराधीन नहीं हैं, सब बराबर के हैं, तो वे सब अहमिन्द्र हो गए। समझ आ रहा है न! ऐसा; इसलिए इनकी व्यवस्था जो है, वो अहमिन्द्रों की व्यवस्था जैसी समझना; लेकिन अहमिन्द्रों से भी ये विशिष्ट हैं, क्योंकि यहाँ जो ब्रह्मलोक में लौकान्तिक देव के रूप में जो उत्पन्न होंगे, ये सभी नियम से सम्यग्दृष्टि ही होंगे। अहमिन्द्रों में उत्पन्न होने वाले सभी सम्यग्दृष्टि हो, ऐसा कोई जरूरी नहीं होता, क्योंकि नौवें ग्रैवेयक में भी अहमिन्द्र होते हैं, लेकिन वहाँ पर भी मिथ्यात्व के साथ जन्म लेने वाले होते हैं।

सभी लौकान्तिक देव सम्यग्दृष्टि होते हैं

लेकिन इन लौकान्तिकों में जन्म लेने वाले नियम से सम्यग्दृष्टि होंगे। ब्रह्म स्वर्ग में रहने वाले जो देव होंगे, वो मिथ्यात्व के साथ उत्पन्न हो सकते हैं, लेकिन ब्रह्मलोक में जिनका आलय बना हुआ है, ऐसे लौकान्तिक देवों का जहाँ पर स्थान है, वहाँ पर किसी भी प्रकार से कोई भी मिथ्यादृष्टि देवों का आगमन नहीं और उनकी उत्पत्ति नहीं।

अलग ही इनका स्थान बना हुआ है, अलग स्थान इतना safe बना हुआ है कि वहाँ कोई पहुँच भी नहीं सकता है। दूसरे देव भी अगर इनसे मिलने आए, तो वहाँ पहुँच नहीं सकते हैं। सुन रहे हो!

लौकान्तिक देवों के निवास स्थान के बाहर घोर अन्धकार है, जहाँ अन्य देव भटक जाते है

अब क्या हो सकता है? जमीन पर कुछ होता, तो खाई खोद दी जाती, किला बना दिया जाता। आकाश में इनके विमान बने हुए हैं और यह एक अकृत्रिम रूप से स्वाभाविक एक रचना बनी हुई है, कि ये जहाँ रहते हैं उन विमानों के बाहर बहुत घोर अन्धकार है। क्या है? जैसे यहाँ पर आप सुनते हैं न! black holes, ऐसे नाम सुनते हो! ठीक इसी तरीके की ये व्यवस्था इनके उस इर्द-गिर्द चारों ओर फैली हुई है। जहाँ इनका यह विमानों का अवस्थान है, वहाँ पर इतना घोर अन्धकार है कि आचार्य कहते हैं कि उस अन्धकार में कोई भी अगर, देव भी अगर मतलब थोड़ी-सी कम विक्रिया ऋद्धि वाला हो, वो फंस जाए, तो निकल नहीं पाए। समझ आ रहा है न! क्योंकि कुछ ऐसे अज्ञात स्थान होते हैं, जहाँ पर फंसने के बाद कुछ नहीं दिखाई देता।

नौवें द्वीप अरुणवर द्वीप से यह अन्धकार ऊपर उठता हुआ स्वर्गों तक जाता है

अब वो अन्धकार देखो, कहाँ से फैला हुआ है? तो आपको ये तो बताया है कि द्वीप-समुद्रों के ऊपर ही ये सब जो हैं विमानों की रचनाएँ हैं और सारे विमान कोई संख्यात योजन के हैं, असंख्यात योजन के हैं, तो ये सभी जो है तिर्यक लोक में ऊपर तक भी फैले हुए हैं, माने तिर्यक लोक के ऊपर फैले हुए हैं। हैं न! तो एक अरुणवरद्वीप आता है, अरुणद्वीप, है न! जो नन्दीश्वरद्वीप के बाद पड़ता है, माने नौवें नम्बर का द्वीप हुआ वो। है न! उस अरुणद्वीप से एक स्वाभाविक रूप से अन्धकार ऊपर की ओर उठता है, पूरे वलयाकार में, है न! संख्यात योजनों का; वह मूल में, मध्य में, अन्त में भी जो है, बिल्कुल इसी तरीके से वह अन्धकार की पूरी की पूरी, एक मतलब कहना चाहिए, पिण्ड के समान वह नीचे से उठकर के और जहाँ पर ये ब्रह्मलोक हैं, वहाँ तक ये अन्धकार के रूप में वलयाकार ये स्थिति बनी हुई है, माने वो अन्धकार के साथ ही पूरा वलयाकार ऊपर तक गया है और आचार्यों ने लिखा हैं कि जहाँ पर इन देवों के विमान बने हुए हैं, उनमें सबसे ऊपर जो अरिष्ट नाम का विमान होता है, उस विमान के नीचे,

जैसे कि मुर्गी होती है, उसके ऊपर की जो कुटी होती है, ऐसे आकार का वह अन्धकार वहाँ पर रूप ले लेता है। कुछ समझ आया? ऐसे समझ लो, जैसे शिखर 🛕 होता है नीचे से बढ़ता हुआ ऊपर की ओर छोटा हो गया, यूँ समझ लो। ठीक है न!

अत्यन्त घोर अन्धकार होता है यह

इस तरीके का वह अन्धकार वहाँ पर जाकर के सघन हो गया और वह अन्धकार वहाँ पर आठों दिशाओं में फैल गया और वह अन्धकार उस क्षेत्र में तिर्यक लोक के अन्त तक चला गया और उसी अन्धकारों में उनके ही, अन्धकार के दिशाओं में भी और उनके अन्तरालों में भी, ये लौकान्तिक देवों के विमान और उनमें रहने वाले लौकान्तिक देव होते हैं। बहुत घोर अन्धकार, निबिड काला बिल्कुल।

सैकड़ों सूर्य-चन्द्रमा का प्रकाश भी उस अन्धकार को नष्ट नहीं कर सकता

मतलब कि वह अन्धकार अगर यहाँ से ऊपर तक जा रहा है, तो आपको ये भी पता होना चाहिए कि अरुणद्वीप में भी ज्योतिर्लोक हैं, क्योंकि ज्योतिर्लोक पूरा ढाई द्वीप में ही नहीं हैं, पूरे असंख्यात द्वीप-समुद्रों तक फैला हुआ हैं; तो वहाँ पर जो ज्योतिषी देवों के भी विमान हैं, उनकी जो सूर्य के, चन्द्रमा के जो विमान हैं, वो भी सैकड़ों की संख्या में होंगे, तो वह भी जो है, उस अन्धकार को नष्ट नहीं कर सकते, इतनी विशेष quality वाला वो अन्धकार है। सुन रहे हो! कुछ भीतर घुस रहा है कि नहीं घुस रहा है? इसलिए घुसेड़ने की कोशिश कर रहा हूँ कि आपके दिमाग में तो अन्धकार माने घर का धुआँ है; सूर्य का प्रकाश आएगा, अन्धकार चला जाएगा; इसलिए मैं विशेषता बता रहा हूँ यह अन्धकार अलग quality का है, ज्योतिर्लोक के हजारों विमान भी उस अन्धकार को दूर नहीं कर पाते हैं। समझ में आ रहा है!

यह एक विशेष **quality** का अन्धकार है

मतलब कोई-कोई अन्धकार भी अपने लिए एक विशेष quality को लिए हुए रहता है। उसका जो धूमिलपना है, कालापन है, वो अपने आप में विशेष है। मतलब उस कालेपन को चीर पाना या उसके पार जा पाना या उसको प्रकाशित कर पाना, ये तो सम्भव नहीं है उन ज्योतिर्लोक के देवों के द्वारा भी। बस वो अन्धकार, अन्धकार के रूप में ही दिखाई देगा, माने वो अन्धकार इतना प्रबल है, कि वो सूर्य-चन्द्रमा के प्रकाश को भी

दबाने वाला है। ऐसा भी अन्धकार होता है कि नहीं होता है? नहीं होता है! तुमने देखा ही क्या है? अब देखो। समझ आ रहा है न! तो जैसे आप प्रकाश की विशेषता समझते हो कि प्रकाश अन्धकार को भगा देता है, ये कोई एकान्त नियम नहीं है, अन्धकार भी प्रकाश को दबा सकता है, ये इससे सीखना।

सूर्य के प्रकाश को बादल के द्वारा या राहु ग्रह के द्वारा ढ़का जा सकता है
ये पुद्गलों का परिणमन है, जो विशेष रूप में हमें दिखाई देता है और ये कभी-कभी जब आप देखते हो सूर्य कितना ही प्रकाशमान हो, जब आँधी चलती है, धूल चलती है, समझ आ रहा है! बादल हो जाते हैं, तो सूर्य के प्रकाश को दबा देते कि नहीं? बिल्कुल काली रात हो जाती है अमावस की दिनों में भी या बिल्कुल ठंड के दिनों में भी बिल्कुल अंधेरा सा छा जाता है और स्वयं सूर्य के नीचे जो केतु ग्रह है, वो भी उसको जो है, केतु या राहु जो कुछ भी, तो वह भी उसके नीचे बिल्कुल अन्धकार ग्रहण करके जो है, उसको सूर्य ग्रहण करा देता है। तो ये सब कैसे हो जाता है? प्रकाशमान चीज को भी आच्छादित किया जा सकता है। है न! तो यही स्थिति इस द्वीप के साथ, जो वह वलयाकार पूरा का पूरा उठा हुआ स्थान है और ऊपर जा कर के वो बिल्कुल जो है एक shape ले लिया है मुर्गी के आकार जैसा, तो वह स्थिति उस अन्धकार की बनी हुई है और वह अन्धकार केवल वही तक नहीं है, तिर्यक लोक के अन्त तक ऐसा फैला हुआ, उतने क्षेत्र में वो अन्धकार आपको हमेशा मिलेगा, ऐसा आचार्यों का कहना है।

लौकान्तिक देवों के प्रमुख भेद
अब इसमें ये जो ब्रह्मलोक में रहने वाले लौकान्तिक देव हैं, ये कितने प्रकार के होते हैं, इनके लिए ये आगे का सूत्र बताया जा रहा है-
सारस्वता-दित्य-वह्न्यरुण-गर्दतोय-तुषि-ताव्याबाधा-रिष्टाश्च॥**25**॥
क्या कहते हैं?

1. सारस्वत,
2. आदित्य,
3. वह्नि,
4. अरुण,
5. गर्दतोय,

6. तुषित,
7. अव्याबाध और
8. अरिष्ट,

ऐसे ये कितने हो गए? आठ प्रकार के ये लौकान्तिक देव हो गए। ठीक है न!

आठ प्रकार के लौकान्तिक देवों के निवास स्थान का दिशानुसार वर्णन

अब ये लौकान्तिक देव ऊपर उस ब्रह्मलोक के अन्त में, पूर्व आदि जो दिशाएँ हैं, उनमें व्यवस्थित रूप से ये लौकान्तिक देव हैं और उनकी शुरुआत की जाती है ऐशान दिशा से, ईशान दिशा।

1. जानते हो ईशान दिशा कहाँ होती है? पूर्व और उत्तर के बीच में↗️, तो पूर्व और उत्तर के बीच में जो दिशा हुई, उसमें हुए सबसे पहले सारस्वत नाम के देव।
2. फिर उस दिशा से जब हम ऐसे🔁 घूमेंगे, प्रदक्षिणा देते हुए, तो उसमें आएँगे आदित्य नाम के देव, पूर्व➡️ दिशा में। सारस्वत-आदित्य, ठीक है न!
3. फिर आदित्य के बाद में हम फिर विदिशा में आये, वो हो गई आग्नेय↘️ दिशा, वह्नि नाम के देव। सुन रहे हो! नाम भी बैठ गया दिशा के अनुसार, वह्नि कुमार आग्नेय दिशा में। हैं न! और
4. फिर उसके उसके बाद में दक्षिण⬇️ दिशा में आए, तो अरुण। वह्न्यरुण ये हो गया।
5. फिर उधर गए नैऋत्य↙️ दिशा में तो अरुण के बाद में गर्दतोय। और
6. फिर उसके बाद में जो पश्चिम⬅️ दिशा आई, तो उसमें आ गए तुषित, तुषित पहले। और
7. फिर उसके बाद में हम उधर गए, तो कौन-सी दिशा? वायव्य दिशा↖️, आग्नेय↗️ के सामने वायव्य↖️ दिशा आएगी, तो उस वायव्य दिशा में पहले मिलेंगे, कौन से देव? अव्याबाध और
8. उत्तर दिशा⬆️ जो ऊपर आ जाएगी, उसमें हो जाएँगे अरिष्ट नाम के, ये देव मिलेंगे।

माने इनके ये विमान बने हुए हैं। समझ आ रहा है! ये हो गए आठ प्रकार के।

आठ प्रकार के लौकान्तिक देवों में प्रत्येक की संख्या

अब इनकी संख्या भी आगम में बड़ी अच्छी बताई गई है, सबको याद हो सकती है मौखिक भी। समझ आ रहा है!

- सारस्वत देवों के विमान सात सौ**(700)**,
- आदित्य देवों के विमान भी सात सौ**(700)**। ठीक है!

फिर इसके बाद में, ये दो हो गए सारस्वत-आदित्य।

- वह्न्यरुण इनके सात हजार सात**(7007)**। एक zero बीच में और बढ़ाना है। ठीक है! वह्नि के भी और अरुण के भी। और
- गर्दतोय और तुषित इनके नौ हजार नौ**(9009)**-नौ हजार नौ**(9009)** ऐसे कर के। और
- अव्याबाध और अरिष्ट इनके ग्यारह हजार ग्यारह**(11011)**-ग्यारह हजार ग्यारह**(11011)** ठीक है!

जैसे बोली लगाते हो आप लोग, आराम से इनकी संख्या भी याद रख सकते हो।

लौकान्तिक देवों की कुल संख्या

ये तो आठ जो हैं ये मूल, मुख्य रूप से ये सारस्वत आदि, ये लौकान्तिक देव हैं आठ। अब इन्हीं की जो विदिशाओं के जो अन्तरालों में दो-दो प्रकार के देव और बताए गए हैं, ये अलग-अलग। हैं न! जैसे मान लो, ईशान दिशा थी और ईशान के साथ में पूर्व दिशा है; तो ईशान↗️ और पूर्व➡️ के बीच में, दो प्रकार के आपको देव और मिलेंगे; उनके भी नाम जो है, जैसे अग्न्याभ-सूर्याभ, इस तरीके के नाम उनके भी शास्त्रों में मिलते हैं। फिर अब इधर दक्षिण⬇️ और वह्नि↘️ जाति के जो देव होंगे, उनके बीच में चन्द्राभ-रत्नाभ इस तरीके के नाम वाले होंगे या सत्याभ। तो इस तरीके से दो-दो हर विदिशाओं में यानि दोनों दिशा-विदिशाओं के अन्तरालों में दो-दो प्रकार के देव और व्यवस्थित कर लो आप। तो कितने हो जाएँगे? आठ दूनी(8×2) सोलह(16) ये हो गए, और आठ(8) पहले के, तो सोलह और आठ(16+8) ये चौबीस(24) प्रकार के देव हो जाते हैं। हैं न! और इन सबके विमानों की संख्याएँ भी अलग-अलग आगम में दी हुई हैं। total जब करते हैं, तो ये चार लाख सात हजार और आठ सौ छह **(4,07,806)** इतने ही ये लौकान्तिक देव होते हैं। थोड़ा-सा कोई मत-मतान्तर होता है, तो संख्या आगे-पीछे भी थोड़ी-बहुत हो सकती है, बाकी ये संख्या एक मानी गई है; चार लाख सात हजार आठ सौ छह, इतने लौकान्तिक देवों की संख्या ये fix है। समझ में आ रहा है!

Class 27

लौकान्तिक देव कौन बनता हैं?

माने वैसे तो ब्रह्म स्वर्ग में रहने वाले जो देव हैं, वो तो सब असंख्यात संख्या में हैं; लेकिन ये जो लौकान्तिक देव है, ये इतनी-सी संख्या में हैं; संख्यात; चार लाख। सुन रहे हो! जो कम संख्या में पाया जाए, उसकी बड़ी दुर्लभता होती है। हर कोई लौकान्तिक नहीं बनता है।

- जो यहाँ पर विशेष रूप से तपस्या के साथ-साथ ब्रह्मचर्य की आराधना करते हैं।
- वैराग्य की भावनाएँ हमेशा भाते हैं।
- बारह अनुप्रेक्षाओं में जिनका मन हमेशा लगा रहता है।
- ऐसी कोई शुभ लेश्या को धारण करने वाले, विशिष्ट तपस्वी मुनि

ही लौकान्तिक देवों में उत्पन्न हो पाते हैं। समझ आ रहा हैं! नहीं तो सौधर्म-ऐशान आदि सोलह स्वर्ग के दरवाजे तो खुले हैं ही हैं। हैं न! लेकिन इन लौकान्तिक देवों में उत्पत्ति होने के कुछ लक्षण विशेष भी होते हैं और वहाँ जाकर के इन लौकान्तिक देवों की जो विशेषता आती है, वो भी सामान्य देवों से अलग होती है।

लौकान्तिक देवों को देवर्षि, ब्रह्मर्षि आदि उपाधियाँ प्राप्त हैं

इन्हें देवों में देवर्षि कहा गया है। जैसे ऋषियों में ब्रह्मचर्य होता है, उनका सम्मान होता है, ऐसे ही देवों में इनका एक विशिष्ट सम्मान हैं, देवों में ये पूज्य होते हैं। वैसे तो सभी देव असंयमी होते हैं लेकिन इनको ब्रह्मचारी की उपाधि मिली हुई है। समझ आ रहा है! ये देवर्षि, ब्रह्मर्षि इन्हीं को बोलते हैं। ब्रह्म कल्प में रहने वाले, देवों को जो ऋषि तुल्य हैं, वह ब्रह्मर्षि भी कहलाते हैं देवों की अपेक्षा से। है न! और

लौकान्तिक देव द्वादशांग के ज्ञाता होते हैं

ये सब अच्छे द्वादशांग के ज्ञाता होते हैं। और

लौकान्तिक देवों की द्रव्य और भाव लेश्याएँ शुक्ल ही होती हैं

- सभी के लिए हमेशा शुक्ल वर्ण ही होता है।
- लेश्या की अपेक्षा से भी अगर बताया जाए, तो सबका जो है शुक्ल वर्ण होता है। है न! वैसे तो इनकी पद्म लेश्या के अनुसार वर्ण होना चाहिए था, लेकिन इनका शुक्ल वर्ण होता है।

लौकान्तिक देव तीर्थंकर भगवान के वैराग्य की अनुमोदना करने के लिए मध्य लोक में आते हैं

ये सभी जो है हमेशा जब भी भगवान का, केवल वैराग्य होता है भगवान को जब दीक्षा कल्याणक के समय पर, बस तभी ये केवल इस ढाई द्वीप में आते हैं; ये इनके लिए विशेष रूप से ऐसा माना जाता है कि इनका केवल आना ढाई द्वीप में उसी समय पर होता है, लेकिन पुराण आदि ग्रन्थों में अन्यत्र भी इनके आने का प्रसङ्ग कहीं-कहीं मिलता है; वो आप लोग कभी पुराण पढ़ो, तो ढंग से पढ़ा करो, कभी देखना। ठीक है न! तो वो भी आप देखना, लेकिन वो है तीर्थंकरों से सम्बन्ध जुड़ा हुआ ही।

लौकान्तिक देवों द्वारा तीर्थंकरों के वैराग्य की अनुमोदना

तो तीर्थंकरों के वैराग्य आदि पर आकर के उनको सम्बोधन देना कि

- आपने बहुत अच्छा विचार किया है।
- यही विचार आपके लिए कल्याणकारी है।
- लोक के लिए कल्याणकारी है।
- इस तरह का जो विचार आपके अन्दर उत्पन्न हुआ है, उसकी मैं अनुमोदना करता हूँ।

इस प्रकार के वैराग्य की अनुमोदना करने के लिए ये ब्रह्मलोक के देव केवल जो है ये ढाई द्वीप में उतरकर के तीर्थंकरों के पास आते हैं, उनकी अनुशंसा करते हैं और वापिस चले जाते हैं।

लौकान्तिक देवों के बहुत ही शान्त परिणाम होते हैं

और

- किसी कल्याणकों में ज्यादा कोई इनका आना-जाना नहीं होता।

और ये जो है,

- सदैव हमेशा शान्त भाव से,
- इनके अन्दर किसी भी तरीके का कोई अभिमान नहीं।
- परिग्रह की कोई भी इच्छाएँ नहीं।

और जिनको एक भव में मोक्ष जाना है, उससे पहले ही देखो, स्वर्गों में रह कर के भी इनके संस्कार कितने अच्छे बने रहते हैं। समझ में आ रहा है!

सौधर्म इन्द्र आदि एक भवावतारी जीव और लौकान्तिक देव, दोनों के क्रियाकलापों में बहुत अन्तर होता है

अब आप कहोगे, महाराज! एक भव में मोक्ष जाने वाले तो और भी हैं, सौधर्म स्वर्ग का सौधर्म इन्द्र भी है। देखो, कुछ भी हो, लेकिन जिनकी जो विशेषताएँ हैं, वो विशेषताएँ उन्हीं के लिए fit बैठती हैं। सौधर्म इन्द्र सब तरीके के क्रियाकलाप करके भी मोक्ष जाता है और ये जो ब्रह्मलोक के वासी हैं, ये अपना

- अलग तरह से इनका वैराग्य होता है,
- इनकी भावनाएँ अलग होती हैं और
- इनका अपना तत्व-चिन्तन और
- एकान्तप्रिय होना,

ये इनकी जो विशेषताएँ हैं, वो अन्य किसी देवों में देखने को नहीं मिलती, इसलिए इनकी विशेषताओं को बताने के लिए ये सूत्र आये हैं। हैं न! तो यहाँ से क्या समझना?

सूत्र में आए 'च' शब्द के दो अभिप्राय

1.इसमें जो 'च' शब्द आया है, इस 'च' शब्द से ये समझ लेना कि अन्य भी जो देव हैं, चौबीस प्रकार के, जो बीच के भेद बताये हैं, वो भी इसमें शामिल हैं।

द्वि चरम शरीरी देवों का वर्णन

2. और इस 'च' शब्द का सम्बन्ध आगे वाले सूत्र से भी जोड़ सकते हो। कैसे? आगे एक सूत्र आ रहा है-

विजयादिषु द्विचरमाः ॥**26**॥

विजय आदि में उत्पन्न होने वाले देव द्वि-चरम देह वाले होते हैं। इसका मतलब यह है कि इससे पहले जो ये लौकान्तिक देव थे, ये एक चरम देह वाले होते हैं, ये 'च' शब्द से

जोड़ लेना। समझ आ रहा है न! यानि कि ये तीनों सूत्र अब एक तरीके से यहाँ पर वैमानिक देवों के बारे में ये वर्णन एक तरीके से पूर्ण हो गया, आगे केवल उनकी आयु इत्यादि का वर्णन रह जाएगा, वो बहुत simple सा।

उपरोक्त तीन सूत्र में एक तथा दो भवावतारी वैमानिक देवों का वर्णन किया गया हैं
यहाँ जो विशेषताएँ बताई जा रही हैं, वो विशेषताओं में

- एक तो एक चरम भव वाले, जिन्हें हम एक भवावतारी कहते हैं। और
- एक द्वि चरम भव वाले,

इन दोनों की व्यवस्था इन सूत्रों में यहाँ बताई गई है। तो ये सिद्ध होता है कि लौकान्तिक देव एक भवावतारी हो गए, एक चरम भव धारण करके ये मुक्त हो जाएँगे। और जो विजय आदि, विजयादि इसका मतलब क्या? नौ ग्रैवेयक के ऊपर अनुदिश होते हैं और उसके ऊपर पञ्च अनुत्तर होते हैं। अनुत्तरों में विजय, वैजयन्त, जयन्त, अपराजित ये चार विमान जो हैं, चार दिशाओं में आते हैं और बीचों-बीच में सर्वार्थसिद्धि नाम का विमान होता है; तो यहाँ पर विजय आदि से चार दिशाओं के वो चार लेना, ऊपर वाले, अनुदिश के भी जो ऊपर हैं। विजय, वैजयन्त, जयन्त और अपराजित और उसके साथ में नीचे जो नौ अनुदिश हैं, उनको भी ले लेना, क्योंकि इनमें भी जो है, यह तेरह इन विमानों में उत्पन्न होने वाले जीव नियम से 'द्वि चरम' भव वाले हो जाते हैं।

यहाँ द्विचरम भव, मनुष्य भव की अपेक्षा कहे गए है
यहाँ दो चरम जो भव बताया है, यह मनुष्य भव की अपेक्षा से बताया है। अब इसको भी ऐसे समझना कि जो देव हैं, अगर वह देव मतलब अपनी आयु पूर्ण करके अगर मनुष्य भव प्राप्त करते हैं, तो मनुष्य भव में मान लो वह उस भव में मोक्ष नहीं गए, तो वह फिर से जो है विजयादिक की आयु का बंध करके, फिर से उस विजय आदि देवों में उत्पन्न होंगे और उत्पन्न यदि उसमें हुए, तो फिर नियम से अगला जो मनुष्य भव मिलेगा, वह उनका दूसरा भव कहलाएगा। ये 'द्वि चरम' का मतलब क्या है? मनुष्य के दो भव बचे रह जाते हैं बस इनके लिए।

लगातार दो बार विजयादिक में (बीच में एक मनुष्य भव के साथ) उत्पन्न होने पर ही द्विचरम भव की नियामकता बनती है

वो कब? जबकि यह लगातार विजयादि में उत्पन्न हो। अगर मान लो वह मनुष्य, पहले विजय आदि से मनुष्य बनें और मनुष्य बन कर के फिर उन्हें देव तो बनना हुआ, लेकिन जरूरी नहीं कि फिर से विजय आदि में उत्पन्न हो। अगर वो कहीं और कल्पवासियों में उत्पन्न हो जाते हैं, सौधर्म आदि में, तो फिर उनका कोई नियम नहीं है। ये नियम किसके लिए है? अगर वो पुन: दुबारा विजयादिक में उत्पन्न हुए, तो फिर नियम से इनका मनुष्य भव प्राप्त होकर के मोक्ष होना नियामक है। इस तरह से यहाँ पर, जिनके लिए मोक्ष जाना नियामक हैं, मनुष्य भव की जिनके लिए सीमितता रह गई हैं, उन्हीं का यहाँ वर्णन किया गया हैं।

द्विचरम भव का नियम केवल विजयादिक चार अनुत्तर विमानवासी और नौ अनुदिश विमानवासी देवों के लिए हैं, ग्रैवेयक वासी देवों के लिए नहीं

नहीं, इसमें ग्रैवेयक शामिल नहीं है। अनुदिश और ऊपर के जो चार अनुत्तर विमानों के चार भेद। अभी इसमें सर्वार्थसिद्धि भी शामिल नहीं है, क्यों नहीं है? क्योंकि सर्वार्थसिद्धि वाले देव भी नियम से एक भवावतारी होते हैं; तो उनको भी नहीं लेना। केवल जो विजय, वैजयन्त, जयन्त, अपराजित ये चार और उसके नीचे जो नौ अनुदिश हैं, उनको लेना क्योंकि इसमें उत्पन्न होने वाले जीव नियम से सम्यग्दृष्टि ही होते हैं।

अनुदिश और अनुत्तर विमानों में सम्यग्दृष्टि जीव ही उत्पन्न होते हैं

अनुदिश में सम्यग्दृष्टि जीव ही उत्पन्न होते हैं; सम्यक्त्व के साथ ही उत्पन्न होते हैं और सम्यक्त्व के साथ ही मरण करते हैं। ये यहाँ पर आकर के विशेषता बनती है, अनुदिश आदि में। हैं न! उससे नीचे नौवें ग्रैवेयक में ये नियम नहीं है। तो नौवें ग्रैवेयक में यह व्यवस्था नहीं; ऊपर के जो अनुत्तर विमानों में चार अनुत्तर विमान हैं विजयादिक, उनकी ये व्यवस्था हैं और उसी के लिए यहाँ पर ये द्वि-चरम भव यहाँ पर कहा गया है।

एक भवावतारी अथवा दो भवावतारी देवों के अतिरिक्त अन्य देवों के भवों के सम्बन्ध में कोई नियम नहीं है

ठीक है न! इस तरह से अब आप ये समझ सकते हो, कि यहाँ पर चरम भव वालों के लिए एक विशेष रूप से हमें ज्ञान दिया जा रहा है, व्यवस्था बताई जा रही है। अब ये देख लो, पूरे वैमानिक देवों में चरम भव को यानि की एक भवावतारी या दो भवावतारी, इनका तो कुछ नियम है, बाकी के किसी का कोई नियम नहीं है, ये जान के चलना; इन सूत्रों से ये फलित होता है। मतलब कि

- लौकान्तिक देवों का एक भवावतारी होने का नियम हो गया।
- सर्वार्थसिद्धि के देवों का एक भवावतारी होने का नियम हो गया। और
- सौधर्म इन्द्र

और

- उसका कुछ और परिकर है, उसको भी बताते हैं, उनका कुछ एक भवावतारी होने का नियम हो गया। और
- ये विजयादिक के द्विचरम भव का नियम हो गया।

बाकी के जितने भी स्वर्ग हैं, उनमें कोई भी आओ, कोई भी जाओ; चाहे सम्यक्त्व के साथ आओ, चाहे मिथ्यात्व के साथ जाओ; चाहे सम्यक्त्व के साथ आओ, सम्यक्त्व के साथ जाओ, नियम नहीं है।

एक बार सम्यग्दर्शन होने के बाद अधिक से अधिक अर्ध पुद्गल परावर्तन काल तक जीव संसार में रह सकता है

सम्यक्त्व के साथ उत्पन्न हो करके भी, सम्यक्त्व के साथ मरण करके भी, आगे और अनन्त भवों में भटक सकते हैं, कोई नियम नहीं है। समझ आ रहा है न! क्योंकि सम्यग्दृष्टि जीव के लिए अर्ध पुद्गल परावर्तन काल बचता है, उसमें अनन्त भव किसी भी तरीके से हो सकते हैं। तो उसका कोई नियम नहीं है। दो भव का नियम, एक भव का नियम, केवल बस इन जीवों के साथ बैठता है।

एक भवावतारी जीवों का कथन करने वाली गाथा

अब एक भव के नियम वाले कौन से जीव हैं? उसके लिए आपको बताता हूँ, एक गाथा। शायद ये त्रिलोकसार ग्रंथ की है

सोहम्मावरदेवी सलोगपालाया दक्खिणमरिंदा।
लोगंतिय सव्वट्ठा तदो चुदा णिव्वुधिं जंति॥

ये एक गाथा आती है। इसका ये तात्पर्य है

- सोहम्म इंदा माने सौधर्म इन्द्र,
- वरदेवी माने उसकी ही देवी, शची और
- सलोगपाला माने लोकपालों से सहित। चार लोकपाल होते हैं। हैं न! उसी सौधर्म इन्द्र के वे चार लोकपाल, वो लोकपाल भी मतलब एक भवावतारी कहे गए हैं। और
- दक्खिणमरिंदा यानि दक्षिणेन्द्र, जिसके बारे में आपको बताया गया था, कि दक्षिण की side के जो-जो इन्द्र हैं, उनके लिए भी। इन्द्र के लिए केवल; इन्द्र के परिवार के लिए नहीं, केवल इन्द्र के लिए। और
- लोगंतिय माने लौकान्तिक और
- सव्वट्ठा माने सर्वार्थसिद्धि वाले देव

इनके लिए बस केवल नियम है।
'तदो चुदा णिव्वुधिं जंति' ये वहाँ से च्युत होकर के निर्वाण को प्राप्त होते हैं। ये उनके लिए नियम बैठता है।

गाथा में आए जीवों के अलावा अन्य किसी का एक भवावतारी होने का नियम नहीं है
बाकी दुनिया में जितने भी देव आदि गति के जीव हैं, उनके लिए कोई नियामकता नहीं हैं। चाहे वो किसी के साथ रहें, कहीं भी जाएँ, किसी भी कल्याणकों में रहें, चाहे सम्यग्दर्शन प्राप्त कर लें या छोड़ दें, कोई तरीके का नियम नहीं है। हो जाए तो ठीक, न हो तो ठीक। समझ आ रहा है! नियम अपने आप में अलग चीज होती है। तो इस पूरे वैमानिक देवों के अन्दर इस तरह का जब ये नियम आ जाता है, तो उससे आप समझ सकते हो कि इतने ही केवल देव जो है, बस fix हैं, जिनका अगले भव में नियम से मोक्ष होगा। बाकी के सब देवों का किसी भी तरीके से भ्रमण हो सकता है।

सर्वार्थसिद्धि विमान के देवों के लिए एक भवावतारी होने का नियम हैं
ऊपर भी ग्रैवेयक देवों में कोई नियम नहीं है, वहाँ तो मिथ्यात्व के साथ भी जन्म लेते हैं; लेकिन जो अनुदिश आदि में भी जन्म लेते हैं, उनमें भी कोई नियम नहीं है। समझ आ रहा है! इसलिए सर्वार्थसिद्धौ च (सूत्र 19), ये विभक्ति के अलग कहने का तात्पर्य यही है, केवल सर्वार्थसिद्धि के जीव ही एक भवावतारी होते हैं। ये जो विजय आदि में से

भी उत्पन्न हुए जीव एक भवावतारी नहीं है, लेकिन दो भवावतारी या द्वि चरम वाले भी तब condition के साथ में, जब ये फिर से मनुष्य भव पाकर के, उसी आयु का बन्ध करके, फिर से विजयादिक में उत्पन्न हो, तो। अगर ये कहीं सौधर्म-ऐशान आदि स्वर्गों में उत्पन्न हो जाते हैं, तो उसके लिए फिर कोई नियामकता नहीं बनती कि इनके लिए आगे और भी कई भव हो सकते हैं। सुन रहे हैं?

देव पुनः देव और नारकी पुनः नारकी नहीं बनता, इसलिए देव या नारकी के लगातार दो भवों की गणना में बीच का एक मनुष्य या तिर्यञ्च भव शामिल होता है
ये एक तरीके से आप ये सोचेंगे कि ये द्विचरम भवपना, इसमें तो बीच में देव का भव भी अन्तराल को प्राप्त हो रहा है, क्योंकि देव से मनुष्य बना, मनुष्य से फिर देव बना और देव से फिर मनुष्य बना। तो इस तरीके का अन्तराल होते हुए भी उसकी संगति उसके साथ कहलाएगी कि हाँ, यह लगातार ही हो रहा है, अगर लगातार होगा तो। जैसे आपको नरकों में भी बताया था। है न! नरकों में भी इसी तरीके से बताया जाता है कि इस नरक में जीव दो बार जन्म ले सकता लगातार, इस नरक में तीन बार। तो नरक में तीन बार जन्म लेने का मतलब ये नहीं है, कि नारकी बना, फिर से नारकी बन गया, फिर से नारकी बन गया, तीन बार; ऐसा नहीं होता है। तो ये जो है नरक और देव गति में सबको पता है कि सिद्धांत है कि नरक से मरा हुआ नारकी फिर से नारकी नहीं बनता और देव भी कभी मर कर के फिर से देव नहीं बनता, जब तक कि बीच में वो मनुष्य इत्यादि या तिर्यञ्च न बन जाए। है न! तो ये लगातार इस अपेक्षा से कहा जाता है, तो इसको इसी रूप में समझना कि भले ही बीच में मनुष्य का भव आ रहा है, देव का भव आ रहा है, लेकिन यह लगातार ही कहा जाएगा। द्वि-चरम भव ही इसके माने जाएँगे, जो मनुष्य भव की अपेक्षा से है। इस तरीके से यहाँ पर जो नियामकता थी, वह बता दी गई।

आगे के सूत्रों का विषय
आगे जो है, अब इन देवों की आयु आदि का वर्णन आएगा। और एक सूत्र बीच में थोड़ी-सी लोक की जो बची हुई व्यवस्था है, उसको बताने के लिए आएगा, वह आगे देखेंगे।